International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

भारत में उदारीकरण की नीति का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ स्नेहवीर सिंह

सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान दिगम्बर जैन कॉलेज, बडौत,

सारांश

आजादी के बाद पंडित नेहरु ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाना बेहतर समझा। लेकिन 1990 के दौर में ''व्यापार करना राज्य का काम नहीं है'', इस विचार के साथ ही दुनिया के बहुत से देशों में उदारीकरण की शुरुआत हुई, जिनमे भारत भी शामिल था। उदारीकरण को समझने के लिए अर्थव्यवस्था के प्रकारों को भी समझना आवश्यक है, जो मुख्यतः तीन प्रकार की होती है – समाजवादी, पूंजीवादी और मिश्रित। समाजवादी अर्थव्यवस्था में अर्थव्यवस्था राज्य के नियन्त्रण में होती है। जबकि मिश्रित अर्थव्यवस्था में राज्य का हस्तक्षेप सीमित हो जाता है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में राज्य का हस्तक्षेप न के ही बराबर होता है। लेकिन सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के लगातार हो रहे निजीकरण ने एक नई बहस को जन्म दे दिया। गडबड वहां शुरू हुई जहाँ से असामान्य और अतिमहत्वपूर्ण सेवाओं को भी निजी हाथों में सौंप दिया गया। निजीकरण के इस दौर ने देश और दुनिया में असमानता को बुरी तरह से बढाया है।

शोधपत्र का उद्देश्य – प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य यह जानना है कि उदारीकरण के इन लगभग 30 वर्षों में भारत ने कितनी तरक्की की और जिन वायदों के साथ सार्वजनिक क्षेत्र की सभी इकाइयों के साथ ही साथ आवश्यक सेवाओं तक को बाजार के नियमों के अनुसार चलने के लिए सभी नियन्त्रण खत्म कर दिए गये, देश उन मानकों तक पहुँच पाया है अथवा नहीं? निजीकरण के इन 30 वर्षों का आम भारतीय के रोजगार, जीवन स्तर, संपत्ति के बंटवारा, शिक्षा और स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ा है?

शोधप्रविधि – उदारीकरण के आम नागरिकों पर प्रभाव को जानने के लिए हम देश और दुनिया की प्रतिष्ठित संस्थाओं के आंकड़ों का प्रयोग करके निष्कर्ष निकलने का प्रयास करेंगे।

मुख्य शब्द – उदारीकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य, सार्वजनिक, अर्थव्यवस्था, निजीकरण, पूंजीपति, प्राइवेट, उद्योगपति

उदारीकरण से आशय नियमों और प्रतिबंधों में ढील देने या उदारता बरतने से है। अर्थात उदारीकरण का अर्थ है, बाजार को प्रतिबंधों से मुक्त करना अथवा उस पर से अनावश्यक सरकारी नियन्त्रण को कम करना। इसकी आवश्यकता तब महसूस की गई जब आर्थिक गतिविधियों के नियमन के लिए बनाए गए नियम–कानून ही देश की आर्थिक वृद्धि और विकास के मार्ग में बड़ी बाधा बन गए। इस दौर को कोटा–परमिट राज के नाम से जाना जाने लगा था। जहाँ किसी भी प्रकार की औद्योगिक और व्यापारिक गतिविधि के लिए लाइसेंस की आवश्यकता होती थी। यह एक मुश्किल और लम्बी व्यवस्था थी, जो केवल लाल फीताशाही को बढ़ावा देती थी। उदारीकरण में मुख्यतः आयात पर प्रतिबंधों में छूट, लाइसेन्स प्रणाली की समाप्ति, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों की संख्या को कम करना, विदेशी कम्पनियों को भारत में उद्योग स्थापित करने की छूट एवं उत्पादन में वृद्धि आदि बाते शामिल हैं। उदारीकरण की नीति को लागू करने के मुख्य उद्देश्य वित्तीय घाटों को कम करना, प्रतिस्पर्धा बढाकर वस्तुओं और सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार करना, रोजगार में वृद्धि करना,वैश्विक व्यापार में साझीदारी करना, विदेशी पूंजी निवेश कराना इत्यादि रहा है।

उदारीकरण को समझने के लिए अर्थव्यवस्था के प्रकारों को भी समझना आवश्यक है, जो मुख्यतः तीन प्रकार की होती है – समाजवादी, पूंजीवादी और मिश्रित। समाजवादी अर्थव्यवस्था में अर्थव्यवस्था राज्य के नियन्त्रण में होती है। जबकि मिश्रित अर्थव्यवस्था में राज्य का हस्तक्षेप सीमित हो जाता है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में राज्य का हस्तक्षेप न के ही बराबर होता है। देश की आजादी के बाद पहले प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने तमाम सारे संस्थानों को सरकारी क्षेत्र में खड़ा करने का काम किया, उनमें फिर चाहे बड़े–बड़े बांध हों या बड़े–बड़े उद्योग और कारखाने। उस दौर में पंडित नेहरू ने कहा, यह बांध और कारखाने ही आधुनिक समय के मंदिर होंगे सिद्ध होंगे। तभी से यह विषय बहस का मुद्दा बना हुआ है कि इन संस्थानों को सरकारी होना चाहिए या उन्हें निजी हाथों में सौंप कर सरकार को एक तरफ हो जाना चाहिए। लेकिन पंडित नेहरु ने मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाना बेहतर समझा।

इसलिए भारत प्राइवेट और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों के साथ एक मिश्रित अर्थव्यवस्था बना। भारत में निजीकरण की शुरुआत साल 1991 में हुई थी। उस समय देश आर्थिक संकट से गुजर रहा था। इसलिए तब भारत में निजीकरण की शुरुआत तत्कालीन वित्त मंत्री डॉ

मनमोहन सिंह ने 1991 में एक बड़े आर्थिक संकट के दौरान की थी और सरकार ने घाटे में चल रही कम्पनियों को निजी क्षेत्रो को बेचने का फैसला किया। इसके अतिरिक्त दुनिया एक ध्रुवीय हो चुकी थी। और पूंजीवाद को ही अपना भाग्य मानकर आगे बढ़ रही थी। दुनिया के जो देश अपना बाजार नहीं खोलना चाह रहे थे, उन पर अलग अलग तरीके के प्रतिबन्ध थोप कर उन्हें मजबूर किया जा रहा था। इसके लिए एक और विचार को गढ़ा गया था कि ''व्यापार राज्य का व्यवसाय नहीं है''।

इसलिए 1991 के आर्थिक सुधारों द्वारा इसे दूर करने का प्रयास किया गया और व्यापार को मुक्त करके बाजार के हवाले कर दिया गया। विकास की इस दौड़ में हम भी पूरी दुनिया के साथ हो गए और देखते ही देखते देश के हर क्षेत्र में निजीकरण की आंधी शुरू हो गई। इसके चलते सरकार ने तमाम जरूरी सेवाओं से अपने हाथ खींचकर उन्हें पूंजीपतियों के हाथों में सौंपना शुरू कर दिया। भारत भी अपनी लोक कल्याणकारी अवधारणा से पीछे हटकर पश्चिमी पूंजीवादी देशों की राह पर आगे बढने लगा। इकोनॉमिक सर्वे, एनसीईआरटी, के आंकड़ों के अनुसार भारतीय रिजर्व बैंक (त्ठप्) ने 1993 में भारतीय रिजर्व बैंक (त्ठप्) ने 13 नए घरेलू बैंकों को बैंकिंग गतिविधियां करने की अनुमति दी।1991 से पहले तक बीएसएनएल का एकाधिकार था। 1999 में नई टेलीकॉम नीति लागू होने के बाद निजी कंपनियां आईं।1956 में लाइफ इंश्योरेंस एक्ट के बाद एक सितंबर 1956 को भारतीय जीवन बीमा निगम की स्थापना हुई थी। 1999 में मल्होत्रा समिति की सिफारिशों के बाद निजी क्षेत्र को अनुमति मिली।1991 तक दूरदर्शन ही था। 1992 में पहला निजी चौनल जीटीवी शुरू हुआ। आज देश में 1000 से ज्यादा चौनल हैं। निश्चित ही इस नीति के चलते तमाम बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारत में निवेश करना शुरू किया, जिसकी वजह से बहुत बड़े स्तर पर यहां के नौजवानों को रोजगार मिलने भी शुरू हो गए। यहां तक इस बात को भी स्वीकार किया जाना चाहिए कि निजी क्षेत्र ने इस देश में विकास और तरक्की के तमाम नए रास्ते खोले हैं। जहाँ आजादी के वक्त देश में सिर्फ 20 यूनिवर्सिटीज और 404 कॉलेज थे। आज देश में 1043 यूनिवर्सिटीज और 42303 डिग्री कॉलेज हैं। 1948 में देश में सिर्फ 30 मेडिकल कॉलेज थे आज 541 मेंडिकल कॉलेज हैं। आजादी के वक्त देश में 36 इंजीनियरिंग कॉलेज थे, जिनमें सालाना सिर्फ 2500 छात्रों के दाखिला मिलता था। आज देश में 2500 इंजीनियरिंग कॉलेज हैं, 1400 पॉली टेक्निकल और 200 प्लानिंग और आर्किटेक्टर कॉलेज हैं। यानी करीब 4100 इंजीनियरिंग कॉलेज और यूनिवर्सिटीज हैं। हालांकि यहां गिनती के हिसाब से निजी कॉलेजों की संख्या ज्यादा है। आज देश में 23 प्ज्े, 20 प्डे और 25 ।प्डै हैं।(आंकड़े जीबिज वेब टीम से साभार)
लेकिन सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के लगातार हो रहे निजीकरण ने एक नई बहस को जन्म दे दिया। गडबड वहां शुरू हुई जहाँ से असामान्य और अतिमहत्वपूर्ण सेवाओं को भी निजी हाथों में सौंप दिया गया। परिणामस्वरूप सभी क्षेत्रों की ही तरह शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में भी भारतीय और विदेशी उद्योगपतियों ने बड़े पैमाने पर निवेश करना शुरू किया और देखते ही देखते देश में शिक्षण संस्थानों और प्राइवेट हॉस्पिटल्स की बाढ़ आ गई। हर तरफ गाँव देहात और खेतों तक में शिक्षण संस्थान दिखाई देने लगे वहीं शहरों और कस्बों की गली – गली में प्राइवेट हॉस्पिटल्स खुल गये।

उदारीकरण की नीति को लागू करने का उद्देश्य यह घोषित किया गया था कि गैर–महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में लगी सार्वजनिक संसाधनों की बड़ी धनराशि को समाज की प्राथमिकता में सर्वोपरि क्षेत्रों में लगाया जायेगा। जैसे– सार्वजनिक स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, प्राथमिक शिक्षा तथा सामाजिक और आवश्यक आधारभूत संरचना। लेकिन व्यवहारिक तौर पर ऐसा किया नहीं गया बल्कि शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी अति आवश्यक सेवाओं को भी लगभग पूरी तरह बाजार और पूंजीपतियों के हवाले कर दिया गया।
गत वर्षों के अनुभव को देखकर हम यह कह सकते हैं कि कुछ अति आवश्यक सेवाओं के क्षेत्र में निजीकरण ने आम आदमी के लिए बहुत बड़ा संकट भी खड़ा किया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजीकरण का रास्ता खुलते ही तमाम बड़े–बड़े अस्पताल, यूनिवर्सिटी, कॉलेज और आधुनिक सुविधाओं से लैस पब्लिक स्कूल खोले गए, लेकिन इन सब का प्रमुख उद्देश्य लोक कल्याण ना होकर केवल मुनाफा था। जबकि शिक्षा और स्वास्थ्य को कभी भी मुनाफाखोरो के हाथ में सौंपना अमानवीय माना जाता रहा है। सरकार द्वारा इस तरीके के सभी संस्थान केवल लोक कल्याण को ध्यान में रखकर खोले जाते रहे हैं। निजी क्षेत्र में खोले गए यह अधिकांश स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय देखते ही देखते मुनाफे की दुकानों में बदल गए। इन स्कूल कॉलेजों में मोटी फीस लेकर बच्चों का दाखिला किया जाने लगा और डिग्रियां बांटी जाने लगी। प्रगति और विकास के जिस उद्घोषणा के साथ उदारीकरण को लागू किया गया था अगर दुनिया की अलग अलग संस्थाओं के आंकड़ों के आधार पर हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि उदारीकरण के बाद देश में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, गरीबी आदि पर क्या प्रभाव पड़ा है।
भारत में शिक्षा की स्थिति को समझने के लिए हम दुनिया के कुछ बड़े देशों के साथ भारत के शिक्षा खर्च की तुलना करके यह समझेंगे कि भारत सरकार शिक्षा पर कितना ध्यान दे रही है –

बड़े देशों का शिक्षा पर खर्च

देश	जीडीपी	शिक्षा पर खर्च	हिस्सेदारी (फीसदी)
नॉर्वे	28.97	1.87	6.38
ब्रिटेन	190.47	11.87	6.23
टमेरिका	1408.34	85.77	6.09
फ्रांस	187.57	9.75	5.20
जर्मनी	267.09	11.27	4.22
जपान	353.86	14.43	4.08

(जीडीपी और खर्च के आंकड़े लाख करोड़ रूपये में)

उपरोक्त सारणी के आधार पर हम देख सकते हैं कि लगातार जीडीपी के 6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करने का दावा करने वाली हमारी सरकारें आज भी शिक्षा पर केवल 2.7 प्रतिशत ही खर्च कर रही हैं। शिक्षा पर खर्च के मामले में भारत का नम्बर दुनिया में 136 वें नम्बर पर है। भारत में इस बार के आम बजट में शिक्षा क्षेत्र को पिछले साल के संशोधित बजट से सिर्फ 3 हजार 141 करोड़ रुपए ज्यादा ही मिले है। इस तरह देश के शिक्षा बजट में इस साल महज 3.69 प्रतिशत का ही इजाफा हुआ। साल 2012–13 में शिक्षा क्षेत्र पर होने वाला खर्च जीडीपी का 3.1 प्रतिशत था। वहीं 2014–15 में यह खर्च 2.8 प्रतिशत और 2015–16 में यह 2.4 प्रतिशत पर आ गया। हालांकि, 2016–17 और 2017–18 में इसमें थोड़ी वृद्धि हुई और अब यह आंकड़ा 2.7 प्रतिशत पर आ गया है। हायर एजुकेशन में भी सरकार ने क्वांटिटी पर ज्यादा और क्वालिटी पर फोकस कम रखा है। थोक के भाव से विश्वविद्यालय खुले हैं, मगर अधिकांश का स्तर कुछ भी नहीं है। इंजीनियरिंग कॉलेजों की स्थिती तो और भी बुरी है। निजी संस्थाओं और उद्यमियों ने कॉलेज और विश्वविद्यालय तो खोल दिए, मगर शिक्षक पूरे और अच्छे नहीं रखे। रोजाना बढ़ती फीसों ने अभिभावकों की कमर तोड़ कर रख दी। हम सबको मालूम है कि एक अच्छे पब्लिक स्कूल में किसी बच्चे को पढ़ाने के लिए लगभग पांच से दस हजार प्रतिमाह तक का खर्च सामान्यतः करना पड़ता है। जबकि हम सभी लोगों को यह अच्छे से मालूम है कि बेरोजगारी के इस दौर में शिक्षा क्षेत्र में सबसे बड़ी डिग्री मानी जाने वाली पीएचडी के बाद भी तमाम ऐसे लोग हैं, जो अनुबंध पर अध्यापन का कार्य कर रहे हैं। उनको वेतन के नाम पर आठ से दस हजार रूपये प्रतिमाह ही मिल पाता है। शिक्षा का व्यवसायीकरण इस हद तक बढा कि दाखिलों तक के लिए ठेके दिए जाने लगे हैं। अगर मेडिकल शिक्षा की बात करें तो किसी एक बच्चे को मेडिकल में मास्टर डिग्री करने के लिए लगभग एक करोड़ रुपए तक का खर्च करना पड़ सकता है।

उदारीकरण के फलस्वरूप भारत दुनिया के गरीब देशों में शामिल है, स्वास्थ्य व शिक्षा के क्षेत्र में दुनिया के 174 देशों में भारत का 116वां स्थान है। इसका खुलासा विश्व बैंक के वार्षिक मानव पूंजी सूचकांक के नवीनतम संस्करण में हुआ है। ग्लोबल हंगर इंडेक्स 2022 में कुल 121 देशों में भारत का स्थान 107 वां है, जिसे निम्न सारणी द्वारा आसानी से समझा जा सकता है–

विश्व भूख सूचकांक में भारत की स्थिति

वर्ष	भारत का क्रम	कुल देशों की संख्या
2022	107	121
2021	101	116
2020	94	107
2019	102	117
2018	103	119

इसके अलावा विश्व असमानता 2022 (World Inequality Report 2022) की रिपोर्ट में भी भारत को एक बड़ा झटका लगा है। इस रिपोर्ट के अनुसार, भारत गरीबी और असमानताओं से भरा हुआ देश है और अब ये दुनिया के सर्वाधिक असमानता वाले देशों की सूची में शामिल हो गया है। इतना ही नहीं इस रिपोर्ट में ये भी दावा किया गया है कि, साल 2021 में भारत की शीर्ष 10 फीसदी आबादी के पास कुल राष्ट्रीय आय का 57 फीसदी है और मात्र 1 फीसदी आबादी के पास राष्ट्रीय आय का 22 फीसदी हिस्सा है। वहीं 50: निचले तबके के लोगों के पास मात्र 13: ही है।

सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (सीएमआईई) भारत की अर्थव्यवस्था पर नजर रखने वाली संस्था है, उसके अनुसार दिसंबर 2021 में बेरोजगारी दर बढ़कर 7.9 फीसदी हो गई। रोजगार पर चर्चा करते हुए सरकार ने हाल ही में राज्यसभा को बताया कि 2018– 2020 के बीच देशभर में लगभग 25 हजार लोगों ने बेरोजगारी और कर्ज के बोझ के चलते आत्महत्या की हैं। केंद्रीय गृह राज्य मंत्री नित्यानंद राय ने नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़ों का हवाला देते हुए राज्यसभा को यह जानकारी दी। बेरोजगारी की

हालत यह है कि हाल ही में निकली रेलवे भर्ती में कुल पदों की संख्या 1 लाख 40 हजार थी, लेकिन उसके लिए ढ़ाई करोड़ लोगों ने आवेदन किया था।
यह केवल भारत में ही नही बल्कि उदारीकरण ने दुनिया में भी असमानता को बुरी तरह बढाया है। संयुक्त राष्ट्र की ताजा रिपोर्ट के मुताबिक इस समय विश्व में 47 करोड़ लोग ऐसे हैं जो या तो बेरोजगार हैं या उनके पास पर्याप्त काम नहीं है। रिपोर्ट में कहा गया है कि इस समय दुनिया का 60 प्रतिशत वर्कफोर्स असंगठित क्षेत्र में काम कर रहा है। उन्हें न तो उचित वेतन मिलता और न ही सामाजिक सुरक्षा से जुड़ी योजनाएं उन तक पहुंच पाती हैं। रिपोर्ट के मुताबिक इस समय दुनिया के 63 करोड़ कामगार लोग गरीबी के माहौल में जीवनयापन कर रहे हैं। इनकी रोज की कमाई 3.2 डॉलर (करीब 228 रुपए) से कम है।
अनेक अध्ययनों के साथ ही साथ दुनिया में एक अध्ययन यह भी किया जाता है किस किस देश के नागरिक सबसे अधिक खुश रहते हैं वर्ष 2012 से यह अध्ययन किया जा रहा है वर्ष 2023 में इस रिपोर्ट में लगभग 136 देशों को शामिल किया गया है रैंकिंग खुशहाली को मापने हेतु 6 प्रमुख कार्यों कार्यों का उपयोग किया जाता है जिसमें सामाजिक सहयोग आए स्वास्थ्य स्वतंत्रता उदारता और भ्रष्टाचार की अनुपस्थिति के मानक बनाए गए हैं इस अध्ययन में भारत की स्थिति बहुत निराशाजनक है कुल 136 देशों में भारत 125 व स्थान पर है जो इसे विश्व के सबसे कम खुशहाल देशों में से एक के रूप में प्रदर्शित करता है जो कि एक निराशाजनक स्थिति है। यह अध्ययन संयुक्त राष्ट्र संघ की एक संस्था का अध्ययन है।

निष्कर्ष – भारत एक गरीब और अत्यधिक असमान देश है। भारत की शीर्ष 10 प्रतिशत आबादी के पास कुल राष्ट्रीय आय का 57 प्रतिशत है, जबकि एक प्रतिशत आबादी के पास 22 प्रतिशत है। वहीं, नीचे की 50 प्रतिशत आबादी का भाग केवल 13 प्रतिशत है। इस हिसाब से भारत में शीर्ष 1: आबादी के पास वर्ष 2021 में कुल राष्ट्रीय आय का पाँचवाँ हिस्सा मौजूद था और नीचे के आधे हिस्से के पास मात्र 13 प्रतिशत हिस्सा था। भारत द्वारा अपनाए गए आर्थिक सुधारों और उदारीकरण ने अधिकतर शीर्ष 1 प्रतिशत को ही लाभान्वित किया है।

वर्ल्ड इनइक्वेलिटी लैब द्वारा प्रकाशित इस रिपोर्ट में दुनियाभर के 100 से अधिक शोधकर्ताओं ने चार वर्षों से न केवल उस गति को मापा है, जिस पर असमानता बढ़ रही है बल्कि इसकी मात्रा भी निर्धारित की है। रिपोर्ट में धन, आय, लिंग और कार्बन उत्सर्जन में असमानता को मापा गया है। 1820 और 2020 के दौरान शीर्ष 10 प्रतिशत लोग ही कुल आय का 50–60 प्रतिशत हिस्सा अर्जित करते थे जबकि निम्न आय वाले 50 प्रतिशत लोग सिर्फ 5 से 15 प्रतिशत ही आय अर्जित करते थे। रिपोर्ट के प्रमुख लेखक लुकास चांसल कहते हैं कि, आंकड़े असमानता के स्तर के बारे में स्पष्ट हैं, असमानता लगभग 200 साल पहले के स्तर पर बनी हुई है। वह कहते हैं, "यह असमानता लोकतंत्र से ज्यादा लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए हमारे द्वारा चुने गए विकल्पों पर सवाल उठाती है।"

हम सभी लोग मनुवाद को कोसते चले आए हैं। मनुवाद रहा था या नहीं, इस पर तो आपके विचार भिन्न हो सकते हैं, लेकिन आज की इस मुक्त अर्थव्यवस्था में जिस मनीवाद का जन्म हुआ है, वह निर्विवाद है। बिना मनी के जैसे आप अपने बच्चे को किसी अच्छे स्कूल में दाखिल तक नहीं करा सकते, ऐसे ही आप किसी अच्छे अस्पताल में अपना इलाज भी नहीं करा सकते। वहीं अगर आपके पास पर्याप्त धन है तो आप कोई भी डिग्री प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि करोड़ों रूपये लगाकर डॉक्टर बनने वाले ये लोग क्या जन कल्याण के लिए अपनी सेवाएं देंगे या केवल अधिक से अधिक धन कमाने के लिए? आये दिन सडक पर पैदा होने वाले बच्चों और मृत शव तक को कन्धों पर उठाये लोगों की खबरें और फोटो देखकर भी अगर हमारी संवेदनाएं नही जगती, तो यह हमारे सभ्य होने पर एक प्रश्न चिन्ह है। हमे रुक कर एक पल जरुर सोचना चाहिए कि मुनाफाखोरी के चलते कहीं हम अपने इंसानी मूल्यों ही से तो दूर नही निकल गये।

कोरोना नामक महामारी के इस संकट ने हमें बहुत से विषयों पर सोचने के लिए मजबूर कर दिया है। इसने हमें मजबूर कर दिया यह सोचने के लिए कि पूरी दुनिया के अधिकांश देश जहां बड़ी–बड़ी मिसाइलें, लड़ाकू जहाज और एटम बम बना रहे हैं, हम लोगों को उसी रास्ते पर चलना चाहिए या हम लोगों को इन सबकी बजाय बड़े–बड़े अस्पताल और स्कूल बनाने शुरू करने चाहिए? इसने हमें मजबूर कर दिया यह सोचने के लिए कि जिस तरीके से इस संकट के समय प्राइवेट चिकित्सा व्यवस्था ने घुटने टेके हैं,वहीं सरकारी डॉक्टर, पुलिस और सफाईकर्मी ही इस संकट में मानवता को बचाने के लिए लड़ रहे हैं। क्या हमें अपने चिकित्सीय स्वरूप का मॉडल पूरी तरह नहीं बदल देना चाहिए? यह यक्ष प्रश्न हमारे सम्मुख खड़ा है कि क्या शिक्षा और चिकित्सा जैसी महत्वपूर्ण सेवाओं के विषय में हम सब लोगों को एक बार फिर से बैठकर कोई गहन चिंतन नहीं करना चाहिए, कि यें आवश्यक सेवाएँ देश की गरीब जनता का कल्याण करने के लिए हैं या कुछ केवल लोगों के मुनाफे के लिए?

निसंदेह उदारीकरण ने भारत को दुनिया में एक जगह दिलाने का काम किया है। लेकिन शिक्षा ,स्वास्थ्य और रोजगार के आंकड़ों के आधार पर हमे मानना होगा कि उदारीकरण के बाद जहाँ सरकार ने लोक कल्याण से हाथ खींच लिए, वहीं औद्योगिक वर्ग ने भी

अपनी सोशल रेस्पोंसिबिलिटी बिलकुल नहीं निभाई। इसके अलावा सरकार को लोगों को सामाजिक सुरक्षा मुहैया करानी ही चाहिए, जिससे जीवन स्तर में सुधार हो। निष्कर्षतः हमें निजीकरण की इस अंधाधुंध गति पर नियन्त्रण करना होगा और यह समझना होगा कि हमारे जैसे देश के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था जैसा सन्तुलन ही अधिक लाभदायी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1ण भूमंडलीकरण (ब्रांड संस्कृति और राष्ट्र), प्रभा खेतान, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली, 110002, 2014।
2ण भूमंडलीकरण के दौर में (चुने हुए निबन्ध), प्रभाकर क्षोत्रिय, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2013।
3ण संसद : लोकतंत्र या नजरों का धोखा, पुन्यप्रसून वाजपेयी – वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2004।
4ण उदारीकरण की तानाशाही, प्रेमसिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008।
5ण भ्रष्टाचार विरोध, विभ्रम और यथार्थ, प्रेमसिंह, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2015।
6ण मानव अधिकारों का संघर्ष, राजकिशोर, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2012।
7ण चाणक्य का नया घोषणापत्र (भारत के संकट का समाधान), पवनकुमार वर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014।
8ण अमर उजाला, नई दिल्ली Published by डिंपल अलावाधी Updated Thu 04 Mar 2021
9ण वैश्विक असमानता रिपोर्ट, 2022
10ण Global Hunger Inde, 2022
11ण दैनिक भास्कर, 8 Dec 2021
12ण दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 27 Jan 2022
13ण राजनीति विज्ञान, ए.डी. आशीर्वादम, कृष्णकान्त मिश्र, एस. चंद एंड कंपनी (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 110055, 2008
14ण आंकड़े, सेंटर फोर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (CMIE)